अमृत कण (ओशो की किताबों से संकलित 68 उद्धरण)

1--फूल और कांटे

मैं कहता हूँ करोड़-करोड़ कांटे भी, फल की एक पंखुड़ी के मुकाबले क्या है। एक गुलाब के फूल की छोटी सी पंखुड़ी
इतना बड़ा मिरेकल है,
इतना बड़ा चमत्कार है
कि करोड़ों कांटे भी इकट्ठे कर लो, उससे क्या सिद्ध होता है कि बड़ी अदभुत है
यह दुनिया, जहां इतने कांटे है
वहां भी मखमल जैसा गुलाब
का फूल पैदा हो सकता है। उससे सिर्फ इतना सिद्ध होता है,
और कुछ भी सिद्ध नहीं होता।
लेकिन यह देखने की दृष्टि पर निर्भर करता है
कि हम कैसे है।

2--भीतर का धन

भीतर एक अन्धकार है, वह बाहर की रोशनी से नहीं मिटता। सच तो यह है कि बाहर जितनी रोशनी होती है, उतना ही भीतर का अंधकार स्पष्ट होता है, रोशनी के संदर्भ में
और भी उभर कर प्रकट होता है। जैसे रात में तारे दिखाई पड़ने लगते है
अंधेरे की पृष्टभूमि में,
दिन में खो जाते है।
ऐसे जितना ही बाहर प्रकाश होता है, जितनी भोतिकता बढ़ती है, उतना ही भीतर का अंधकार स्पष्ट होता है।
जितनी बाहर समृद्धि बढ़ती है, उतनी ही भीतर की दरिद्रता का पता चलता है। जितना बाहर सुख-वैभव के सामान बढ़ते है, उतना ही भीतर का दुःख सालता है।
इसलिए मैं एक अनूठी बात कहता हूँ,
जो तुमसे कभी नहीं कहीं गई है।
मैं चाहता हूँ, पृथ्वी समृद्ध हो, खूब समृद्ध हो। धन ही धन का अंबार लगे, कोई गरीब न हो।
क्योंकि जितना ही तुम्हें भीतर की निर्धनता का बोध होगा। जितने तुम्हारे पास वैभव के साधन होंगे,
उतने ही तुम्हें पीड़ा मालूम होगी कि भीतर तो सब खाली-खाली है,
रिक्त, एक दम रिक्त।

3--विश्वास जहर है

सत्य विश्वास नहीं है, अनुभव है। सब विश्वास झूठे होते है। सब विश्वास अंधे होते है। और क्या है तुम्हारे जीवन का आधार, सिवाय विश्वासों के और कुछ भी नहीं। तुम्हारी बुनियाद के पत्थर क्या है, सिवाय विश्वास। कोई ईश्वर को मान रहा है, कोई स्वर्ग को मान रहा है, कोई नरक को मान रहा है, कोई पाप-पुण्य के सिद्धांत को मान रहा है, कोई एक ही जीवन को मान रहा है। तुम्हारे पास कोई भी प्रमाण नहीं किसी बात का। लेकिन तुम माने चले जाते है, खोजते नहीं।

खोज के लिए सबसे बड़ी रूकावट हैः विश्वासी मन। और आश्चर्य तो यह है कि यही समझाया गया है, कि विश्वासी मन ही धार्मिक होता है, और मैं तुमसे कहता हूँ कि विश्वासी मन अधामिर्क है। फिर चाहे वह विश्वास नास्तिकता का हो, चाहे आस्तिकता का, इससे कुछ भेद नहीं पड़ता। विश्वास जहर है।

4--स्वतंत्र व्यक्ति

स्वतंत्र व्यक्ति न हिंदू होता है,

न मुसलमान होता है, न ईसाई होता है। स्वतंत्र व्यक्ति तो सिर्फ मनुष्य होता है।

स्वतंत्र व्यक्ति न भारतीय होता है, न पाकिस्तानी, न चीनी होता है, न अमरीकी होता है।

स्वतंत्र व्यक्ति तो कहेगा, सारी पृथ्वी हमारी है, सारा अस्तित्व हमारा है।

क्यों हम इसे खंडों में बांटें क्योंकि सब खंडों में बांटना आज नहीं कल युद्धों का कारण बनता है। लकीरें खीचो, कि उस तरफ संगीनों खड़ी हो गई।

फिर लकीरों को जरा यहां-वहां किसी ने पार किया कि बंदूकें चली।

जब तक जमीन के नक्शे पर लकीरें रहेंगी तब तक जमीन कभी शांति से नहीं जी सकती।

प्रेम के बिना शांति की कोई

संभावना नहीं है।

5--स्वाध्याय

स्वाध्याय का अर्थ है,

हमारे भीतर के जो जगत है। चेतना का जो लोक है,

उसका निरीक्षण। वहां ठहर कर देखना,

अध्ययन करना। क्योंकि वहां बहुत कुछ घट रहा है। विचार चल रहे है,

स्मृतियाँ गतिमान है। कल्पनाएं उठ रही है,

वासनाएं जग रही है। बहुत भीड़-भाड़ है भीतर,

कुंभ का मेला सदा लगा रहता है। उसका उसका निरीक्षण,
अवलोकन उसके प्रति जागरूक होना।
यह स्वाध्याय का अर्थ है।

6--प्रेम का पाठ

मैं तुमसे कहता हुँः आदमी को प्रेम करे। वही तुम प्रेम का पहला पाठ सीखोगे। और वही पाठ तुम्हें इतना मदमस्त कर देगा, कि तुम जल्दी ही पूछने लगोगेः और बड़ा प्रेम पात्र कहां से खोजू।

मनुष्य से ही प्रेम करने से ही तुम्हे अनुभव होगा। कि मनुष्य छोटा पात्र है, प्रेम को जगा तो देता है। लेकिन तृप्त नहीं कर पाता, प्रेम को उकसा तो देता है। लेकिन संतुष्ट नहीं कर पाता, प्रेम की पुकार तो पैदा कर देता है, खोज शुरू हो जाती है, लेकिन पुकार इतनी बड़ी है।

और आदमी इतना छोटा कि फिर पुकार पुरी नहीं हो पाती। फिर वही बडी पुकार, जो आदमी तृप्त नहीं कर सकता, परमात्मा की तलाश में निकलती है।

7--रंगना है तुम्हारे प्राणों को

रँगना है तुम्हारे प्राणों को रस के नये-नये आयामों में। नयी-नयी भाव-भंगिमाएँ तुममें उदित हों। नये-नये मंदिरों के शिखर तुममें उठे। नये गीतों रंगना है तुम्हारी चूनर को रहस्य के अनंत-अनंत रंगों में। का जन्म हो। नये नृत्य तुम नाचो।

नये वीणाएं तुम बजाओ, नित नूतन।

तुम खोजों, और जितना खोजों, उतना ही पाओ कि और खोजने को मौजूद।

जितना खोजों, उतनी खोज बढ़ती जाएं। खोज कभी अंत पर न आए। यात्रा सिखाता हूं मैं, मंजिल तो बहाने है। मंजिल की बात करता हूं, ताकि तुम चलो। मजा तो यात्रा का ही हैं, यात्रा ही मंजिल है।।

8--क्षणभंगुर में शाश्वत

तुम्हें उदासी सिखाने को नहीं हूँ।

मैं तुम्हें संगीत देना चाहता हूँ। लेकिन मैं जानता हूँ तुम्हारी अड़चन। तुम्हें उदास चित लोगों ने बहुत प्रभावित किया है। सदियों से धर्म के नाम पर, तुम्हें जीवन का निषेध सिखाया गया है। जीवन का विरोध सिखाया गया है। सब पाप है, प्रेम पाप है, संबंध पाप है, मैत्री पाप है। नाता-रिश्ता पाप है, तुम पाप से घिर गए हो। नहीं कि सब

पाप है, लेकिन तुम्हारी धारणाओं में सब पाप हो गया है। जो छुओ वही गलत है, जो करो वही गलत है। तुम नकार से घिर गये हो, तुम्हारी फांसी लग गई हैं नकार में।

मैं तुम्हें नकार से मुक्त करना चाहता हूँः मैं कहता हूँ। यह क्षणभंगुर भी उसी शाश्वत की ही लीला हैं। यह उसका ही रास है, वही नाच रहा है इसके मध्य में। तुम्हें दिखाई पड़े न दिखाई पड़े, मगर नाच में तो सम्मिलित हो जाओ। नाच में सम्मिलित होते-होते ही वह आँख भी खुलेगी, जिससे तुम्हें वह दिखाई पड़ने लगेगा।

9--उत्सव का मंदिर

यह देश बड़ा मूढ़ हो गया है। इस देश ने कभी गौरव के दिन भी देखे है, कभी महमामंडित दिन भी देखे है। तब इसने खजुराहो बनाए थे, कोणार्क बनाया था। पुरी के और भुवनेश्वर के मंदिर बनाए थे। वे जीवन के मंदिर थे, उमंग के मंदिर थे, उत्सव के मंदिर थे। नाच-नृत्य-गीत, वे प्रेम के मंदिर थे। फिर यह देश पतित हुआ, यह देश बूढ़ा हुआ, सड़ा। फिर यह भूल ही गया जीवन की तरंगें।

जीवन का खुमार उतर गया। लोग बस यहीं सोचने लगे, कैसे भव सागर से पार हो जाएं। आवागमन से कैसे छुटकारा हो, लोग मरणवादी हो गए। लोग आत्मघाती हो गए, जिसको तुम आवागमन से छुटकारा कहते हो। वह कोई तुम्हारी धार्मिक भाव-दशा नहीं है, वह सिर्फ तुम्हारी आत्मघाती वृति है। यह देश पतित हुआ, इसने अपने शिखर खो दिए सूर्यमंड़ित। यह बहुत नीची तराइयों में उतर गया,

वहां से अब इसको सिवाय मृत्यु के कुछ भी नहीं सूझता है। यह बहुत डर गया है, यह हर चीज से भयभीत है। यह मनुष्य की प्रकृति से भयभीत है। यह किसी प्राकृतिक तत्व को स्वीकृति नहीं देना चाहता।

10--अनुकरण नहीं बोध

न तो पश्चिम का अनुकरण करना है, न पूरब का अनुकरण करना है, न अतीत का अनुकरण करना है। अनुकरण ही नहीं करना है। बोध से जीना है। और काश हम दुनिया में बोध की हवा और वातावरण पैदा कर सके। यही मेरा प्रयास है। काश हम जगत में बोध को सम्मान दे सकें, सत्कार दे सकें। तो न पश्चिम बचेगा, न पूरब बचेगा।

न मुसलमान बचेंगे, न हिंदू बचेंगे

न ईसाई, न जैन, न बौध ही बचेंगे। सिर्फ बोध बचेगा और बोध को उपलब्ध व्यक्ति बचेंगे। ऐसे ही व्यक्तियों से इस जगत में गौरव है, गरिमा है। ऐसे ही व्यक्ति इस जगत के नमक है।

11-आनंद से जीओ

मेरा संदेश छोटा सा है, आनंद से जीओ। और जीवन के समस्त रंग को जीओ, सारे स्वरों को जाओ। कुछ भी निषेध नहीं करना है। जो भी परमात्मा का है, शुभ है। जो भी उसने दिया है, अर्थपूर्ण है। उसमें से किसी भी चीज का इनकार करना, परमात्मा को ही इनकार करना है,

वह नास्तिकता है। और तब एक अपूर्व क्रांति घटती है।

जब तुम सबको स्वीकार कर लेते है। और आनंद से जीने लगते है, तुम्हारे भीतर रूपांतरण की प्रक्रिया शुरू होती है। तुम्हारे भीतर की रसायन बदलती है

--क्रोध करूणा बन जाता है। काम राम बन जाता है। तुम्हारे भीतर कांटे फूलों कि तरह खिलनें लगते है।

12--घर्म विज्ञान है--

घर्म प्रयोग है, विचार नहीं।

घर्म प्रक्रिया है, चिंतना नहीं। घर्म विज्ञान है, दर्शन नहीं।

घर्म फिलासफी नहीं है, साइंस है। निश्चित ही प्रयोगशाला

कोई बाहरी प्रयोगशाला नहीं है। कि जहां आप जाएं और टेस्ट- टयूब और सामान जुटा कर प्रयोग करने लगें। आप ही प्रयोगशाला बनेंगे। आपके भीतर ही सारा का सारा प्रयोग फलित होने बाला है।

13--ध्यानः परम संवेदना--

मैं चाहता हूं कि तुम्हारा जीवन संवेदनशील हो,

गहन संवेदना से भरा हो। और इसी सारी संवेदना के बीच में ध्यान की संवेदना पैदा होती है।

ध्यान परम संवेदना का नाम है। जब तुम्हारी सारी इंद्रियाँ अपनी समग्रता में, अपनी परिपूर्णता में सक्रिय होती है। जागरूक होती है, तो उन्ही सबके बीच में एक नया फूल खिलता है,

जिसका तुम्हें अब तक कोई भी पता नहीं था। मगर उसी भूमिका में वह फूल खिलता है--वह है ध्यान। ध्यान का अर्थ हैः जीवन के गहनतम की संवेदना। जीवन में जो रहस्यपूर्ण है,

उसकी संवेदना। जो आंखों से नहीं दिर्खाइ पड़ता,

वह भी दिखाई पड़ने लगेः तो ध्यान। जो कान से नहीं सुनाई पड़ता,

वह भी सुनाई पड़ने लगे : तो ध्यान। जो हाथ से नहीं छुआ जा सकता,

उसका भी स्पर्श होने लगेः तो ध्यान।

ध्यान तुम्हारी सारी संवेदनाओं का सार-निचोड़ है।

14--तंत्र-पदार्थवाद अध्यात्मवाद--

इंद्रधनुष प्रतीक है पृथ्वी को आकाश से जोड़ देने का। मैं पृथ्वी के भी प्रेम में हूँ और आकाश के भी प्रेम में। मैं पदार्थ के भी प्रेम में हूँ और परमात्मा के भी प्रेम में। मैं प्रेम के सेतु से परमात्मा और पदार्थ को जोड़ देना चाहता हूॅं। मैं पदार्थवादी ही नहीं हूँ, मैं अध्यात्मवादी ही नहीं हूं, मैं दोनों एक साथ हूं, अगर तुम समझ सको पदार्थवाद'अध्यात्मवाद। तो तुम तंत्र को समझ लोगे। और जो तंत्र को समझेगा, वही मुझे समझ सकता है।

15--प्रसाद पूर्ण जीवन--

मैं धर्म को जीने की कला कहता हूँ। धर्म कोई पूजा-पाठ नहीं है। धर्म का मंदिर और मस्जिद से कुछ लेना देना नहीं है। धर्म तो है जीवन की कला। जीवन को ऐसे जिया जा सकता है-- ऐसे कलात्मक ढंग से, प्रसाद पूर्ण ढंग से। कि तुम्हारे जीवन में हजार पंखुड़ियों वाला कमल खिले। कि तुम्हारे जीवन में समाधि लगे, कि तुम्हारे जीवन में भी ऐसे गीत उठे जैसे कोयल के, कि तुम्हारे भीतर भी हृ्रदय में ऐसी-ऐसी भाव-भंगिमाएँ जगें। जो भाव-भंगिमाएँ अगर प्रकट हो जाएं, तो मीरा का नृत्य पैदा होता है, चैतन्य के भजन बनते है।

16--सौंदर्यः परमात्मा का निकटतम द्वार--

सौंदर्य परमात्मा का निकटतम द्वार है।

जो सत्य को खोजने निकलते है, वे लंबी यात्रा पर निकले है। उनकी यात्रा ऐसी है, जैसे कोई अपने हाथ को सिर के पीछे से घुमा कर कान पकड़े।

जो सौंदर्य को खोजते है, उन्हें सीधा-सीधा मिल जाता है।

क्योंकि सौंदर्य अभी मौजूद है- इन हरे वृक्षों में, पक्षियों की चहचहाहट में, इस कोयल की आवज में,--सौंदर्य अभी मौजूद है। सत्य को तो खोजना पड़े। और सत्य तो कुछ बौद्धिक बात मालूम होती है, हार्दिक नहीं।

सत्य का अर्थ होता है--गणित बिठाना होगा, तर्क करना होगा। और सौंदर्य तो ऐसा ही बरसा पड़ रहा है। न तर्क बिठाना, न गणित करना है-- सौंदर्य चारों तरफ उपस्थित है। धर्म को सत्य से अत्यधिक जोर देने का परिणाम यह हुआ। कि धर्म दार्शनिक होकर रह गया, विचार होकर रह गया। मैं भी तुमसे चाहता हूँ कि तुम सौंदर्य को परखना शुरू करो। सौंदर्य को, संगीत को, काव्य को-- परमात्मा के निकटतम द्वार जानो।

17--नीतिः काव्य पूर्ण आचरण--

हुई है। काव्य पैदा होता है तुम्हारे भीतर संगीत के अनुभव से। तुम्हारा समस्त आचरण काव्यपूर्ण हो जाता है। काव्यपूर्ण आचरण से मैं नैतिक आचरण कहता हूँ-- यह मेरी परिभाषा। तुम मुझसे पूछो कि नीति क्या है?

तो मैं कहूंगाः काव्यपूर्ण आचरण। ऐसा आचरण जिसमें कविता हो। मेरी नीति की परिभाषा सौंदर्य-शास्त्र परक है। सौंदर्य कसौटी है। नीति मैं उसको नहीं कहता जो तुमने जबर्दस्ती थोप ली है। नीति मैं उसको कहता हूँ जो तुम्हारे भीतर के संगीत के सुनने से तुम्हारे जीवन में अवतरित होनी शुरू हुई है। आई है, लाई नहीं गई है। आरोपित नहीं है, स्वतः स्फूर्त है, सम्पूर्ण है।

18--संगीत की साधना-

संगीत साधना है। संगीत की साधना से अपने आप काव्य का
आविर्भाव होता है। काव्य है संगीत की अभिव्यक्ति। काव्य है संगीत की देह। और जैसे ही संगीत का जन्म होता है। वैसे ही सौंदर्य का बोध पैदा होता है। संगीत की संवेदनशीलता में ही जो अनुभव होता है अस्तित्व का उस अनुभव का नाम सौंदर्य है। काव्य है देह संगीत की, तुम साधो एक संगीत, फिर ये दोनों--देह और आत्मा, अपने आप प्रकट होने शुरू होते है।

19--मेरा संदेशः उत्सव, महोत्सव--

मैं गीत सिखाता हूं, मैं संगीत सिखाता हूं, मेरा संदेश एक ही हैः उत्सव-महोत्सव। और उत्सव-महोत्सव को सिद्धांत नहीं बनाया जा सकता, केवल जीवनचर्या हो सकती है यह। तुम्हारा जीवन की कह सकेगा। ओंठों से कहोगे, बात थोथी और झूठी हो जाएगी। प्राणों से कहनी होगी, श्वासों से कहनी होगी, और जहां आनंद है वहीं प्रेम है। और जहां प्रेम है वहीं परमात्मा है। मैं एक प्रेम का मंदिर बना रहा हूं। तुम धन्य भागी हो, उस मंदिर के बनाने में। तुम्हारे हाथों का सहारा है, तुम ईंटें चुन रहे हो उस मंदिर की। तुम द्वार-दरवाजे बन रहे हो उस मंदिर के।।

20--जीवन एक खुला रहस्य--

जीवन एक खुला रहस्य है-- ओपन सीक्रेट। ध्यान रहे, दोहरे शब्द उपयोग करता हूँ, ओपन सीक्रेट--खुला रहस्य। जीवन बिल्कुल खुला है। आँख के सामने है, चारों तरु। कहीं भी छिपा नहीं है। कोई पर्दा नहीं है। फिर भी रहस्य है।

21--कमल की याद---

मैं तुम्हें कमल की याद दिलाना चाहता हूँ। कीचड़ की निंदा में मत पेड़ो, कमल की तलाश करो।, और जिस कद तुम कीचड़ में कमल को पा लोगे, उस दिन क्या कीचड़ को धन्यवाद न दोगे? उस दिन क्या देह को धन्यवाद न दोगे? उस दिन क्या इस पार्थिव जगत के प्रति अनुग्रह से न भरोगे?

जिस पार्थिव जगत में परमात्मा का अनुभव हो सकता है। क्या उस पार्थिव जगत की निंदा की जा सकती है मैं तुम्हें संसार के प्रति प्रेम से भरना चाहता हूँ।

मैं चाहता हूँ कि तुम्हारे ह््रदय में संसार के निषेद की जो सदियों-सदियों पुरानी धारणाओं के संस्कार है। वो आमूल मिट जाएं, उन्हें पोंछ डाला जाए। वे ही तुम्हें रोक रहें है, परमात्मा को देखने और जानने से। नाचों, तो तुम पाओगें उसे। नृत्य में वह करीब से करीब होता है। गुनगुनाओ, गाओ,

तो वह भी गुनगुनाएगा तुम्हारे भीतर, गाएगा तुम्हारे भीतर। ध्यान रहें, परमात्मा के मंदिर में वे ही लोग प्रवेश करते है, जो नाचते हुए प्रवेश करते है, जो हंसते हुए प्रवेश करते है। जो आनंदित प्रवेश करते है। रोते हुए लोगों ने परमात्मा के द्वार पर कभी मार्ग नहीं पाया है।

22--सेवा नहीं, ध्यान चाहिए----

सेवा से कुछ भी नहीं होता।

जागों। होश सम्हालों। और तब तुम्हें दिखाई पड़ेगा कि आदमी दुःखी है, इसलिए नहीं कि दुनियां में शिक्षा कम है, या दवाइयां कम है। आदमी दुःखी है इसलिए कि दुनियां में ध्यान कम है। लेकिन यह भी तुम्हें तभी पता चलेगा, जब तुम्हारा ध्यान जगेगा और तुम्हारे दुःख विसर्जित हो जाएंगे-- तब तुम्हें पता चलेगा। फिर तुम दूसरों में भी ध्यान को जगाने की कोशिश में लगना। बस एक काम करने जैसा है कि लोगों का ध्यान जगे।

मनुष्य इतना परेशान है, क्योंकि मूर्च्छित है। और मनुष्य मूर्च्छित होने के कारण दुःखी है।

23--समाज-सेवक---

मैं समाज-सेवक पैदा नहीं करना चाहता। मैं चाहता हूँ ऐसे लोग जो जीवंत है, जो आनंद से भरे है, और जिनके आनंद से अपने आप सेवा निकले, उन्हें पता भी न चले की हम सेवा कर रहे है। मैं तुमसे कोई कर्तव्य करने को नहीं कह रहा हूँ। मैं तो चाहता हूँ, तुम्हारे जीवन में जो भी हो, वह प्रेम से हो, कर्तव्य से नहीं। कर्तव्य से जब भी कोई बात होती है, तो चूक हो जाती है। कर्तव्य का मतलब यह होता है, करने की इच्छा नहीं है, कर रहे है-- कर्तव्य है।

'कर्तव्य है' का अर्थ होता है, चाहते तो नहीं मजबूरी है। प्रेम से जब तुम करते हो तो कर्तव्य नहीं होता, तब तुम्हारा आनंद होता है, तुम्हारा रस होता है।

24--वासना से मैत्री---

मैं कोई स्वेच्छाचारी समाज की शिक्षा नहीं दे रहा हूँ। मैं निश्चित ही चाहता कि तुम मुक्त हो ही तब सकोगे, जब तुम वासना के प्रति सारा दुर्भाव छोड़ दो, सारी निंदा छोड़ दो। तुम वासना से मैत्री साधो। क्योंकि वासना तुम्हारी है, तुम वासना हो। दुर्भाव साध्ल्लगे, तो भीतर एक कलह शुरू हो जाएगी, शांति निर्मित नहीं होगी। लड़ों मत, लड़ोगे तो खंड़-खंड़ हो जाओगे, दो टुकड़ो में बंट जाओगे। और आदमी दो टुकड़ो में बंट गया है। वह आदमी परमात्मा को कभी न जान पाएगा। परमात्मा को वही जान पाता है जो एक हो गया है।

25-- आचरण नहीं--आत्मा

मैं आचरण नहीं सिखाता, मैं तो सिर्फ एक बात ही सिखाता हूँ--ध्यान। तुम निर्विचार होने लगो,

तुम शांत होने लगो,

तुम मौन होने लगो, फिर शोष सब उससे आएगा। फिर एक दिन ब्रह््रम्चर्य भी आएगा। और एक दिन तुम्हारा भोजन में जो पागल रस है, वह भी चला जाएगा। वस्त्रों से तुम्हारा जो मोह है, वह भी छूट जाएगा। मगर मैं कहता नहीं कि छोड़ो, छूटना चाहिए--सहज, अपने आप। तो फिर कभी इस तरह की विक्षिप्तता नहीं आती। नहीं तो आज नहीं कल तुम विमला देवी जैसी स्थिति में उलझ जाओगे। करोड़ों लोग उलझे है, इसी तरह, मैं इस उलझाव से तुम्हें मुक्त करना चाहता हूँ। आचरण नहीं, आत्मा।

अनुकरण नहीं, निजता। स्वतंत्रता। 26--परमात्मा से संबंध--- ध्यान रहे, इसे एक सुत्र, गहरा सुत्र समझ लें, कि जो मैं हूं, जैसा मैं हूँ, जहां में हूँ, उसी तरह के संबंध मेरे निर्मित हो सकते है। अगर मैं मानता हूँ मैं शरीर हूँ, तो मेरा संबंध केवल उनसे ही हो सकता है जो शरीर है। अगर मैं मानता हूँ कि मैं मन हूं, तो मेरा संबंध उनसे होंगे जो मानते है कि मैं मन हूं, अगर मैं मानता हूं कि मैं चेतना हूं,

तो मेरा संबंध उनसे हो सकेंगे जो मानते है कि वे चैतन्य है।

अगर मैं परमात्मा से संबंध जोड़ना चाहता हूं,

तो मुझे परमात्मा कि तरह ही शून्य और निराकार हो जाना पड़ेगा, जहां मैं कि कोई ध्वनि भी न उठती हो, क्योंकि मैं आकार देता है। वहां सब शून्य होगा तो ही मैं शून्य से जुड़ पाऊंगा। निराकार भीतर मैं हो जाऊँ, तो ही बाहर के निराकार के जुड़ पाऊँ गा।

जिससे जुड़ना हो,

वैसे ही हो जाने के सिवाय और कोई उपाय नहीं है। जिसको खोजना हो, वैसे ही बन जाने के सिवाय और कोई उपाय नहीं है।

26--उपनिषद----

उपनिषद धर्म का विज्ञान है। जैसे विज्ञान पदार्थ के भीतर

छिपे हुए सत्य को खोजता है। जैसे विज्ञान पदार्थ को तोड़ता है, अणु-अणु को तोड़ता है और उसके भीतर छिपी हुई ऊर्जा का पता लगाता है, नियम की खोज करता है। किस नियम के आधार पर पदार्थ चल रहा है। इसका अन्वेषण करता है। वैसे ही उपनिषद चेतना के अणु-अणु में प्रवेश करते है। और चैतन्य का क्या नियम है, और चैतन्य कैसे जगत में गतिमान है, कैसे स्थिर है, कैसे छिपा है, कैसे प्रकट है, इसकी खोज करते है।

27--प्रेम और ध्यान--

मैं तो दो ही शब्दों पर जोर देता हूं, प्रेम और ध्यान। क्येंकि मेरे लेखे अस्तित्व के मंदिर के दो ही विराट दरवाजे है, एक का नाम प्रेम और दूसरे का नाम ध्यान, चाहो तो प्रेम से प्रवेश कर जाओ। चाहो तो ध्यान से प्रवेश कर जाओ। हालांकि दोनों में से प्रवेश की शर्त एक ही है। इसलिए तुम्हारी मौज। फासला कुछ भी नहीं हैं। शर्त एक ही है, अहंकार दोनों में छोड़ना होता है। ध्यान में भी अहंकार को छोड़ना होता है, प्रेम में भी अहंकार को छोड़ना होता है। तो चाहो तो यूँ कह लो कि एक ही सिक्के के दो पहलू है। एक तरफ प्रेम, एक तरफ ध्यान।

28--साधुता--

साधुता अकेले हो सकती है। क्योंकि साधुता ऐसा दीया है,

जो बिन बाती बिन तेल जलता है। असाधुता अकेले नहीं हो सकती। उसके लिए दूसरों का तेल और बाती और सहारा सब कुछ चाहिए। असाधुता एक सामाजिक संबंध है। साधुता असंगता का नाम है। वह कोई संबंध नहीं है, वह कोई रिलेशनशिप नहीं है। वह तुम्हारे अकेले होने का मजा है। इसलिए साधु एकांत खोजता है, असाधु भीड़ खोजता है, असाधु एकांत में भी चला जाए तो कल्पना से भीड़ में होता है। साधु भीड़ में भी खड़ा रहे तो भी अकेला होता है। क्योंकि एक सत्य उसे दिखाई पड़ गया है। कि जो भी मेरे पास मेरे अकेलेपन में है, वहीं मेरी संपदा है। जो दूसरे की मौजूदगी से मुझमें होता है, वही असत्य है, वही माया है। वह वास्तविक नहीं है।

29--मुक्ताचार--

उसे मैं ले जा नहीं सकता। मैं लोगों को नियम तोड़ कर पशु-पक्षियों की भीति जीने को नहीं कह रह हूँ। मैं लोगों को जाग कर बुद्धों की भांति जीने को कह रहा हूँ। इस मुक्ताचार को उसी अर्थ में, मुक्ताचार नहीं कहां जा सकता है। जिस अर्थ में पश्चिम में एक समाज निर्मित हो रहा है। यह मुक्ताचार मुक्तों का आचरण है।

30--अनुपयोगी का महत्व--

जीवन में जो भी महत्वपूर्ण है, वह परपजलेस, प्रयोजन मुक्त है। जीवन में जो भी महत्वपूर्ण है। उसकी बाजार में कोई कीमत नहीं है। प्रेम की कोई कीमत नहीं है, आनंद की कोई कीमत नहीं है, प्रार्थना की कोई कीमत नहीं है। परमात्मा की कोई कीमत नहीं है। न ध्यान की कोई कीमत है, लेकिन जिस जिंदगी में कोई अनुपयोगी, नॉन-यूटिलिटेरियन मार्ग नहीं होता। उस जिंदगी में सितारों की चमक भी खो जाती है। उस जिंदगी में फूलों की सुगंध भी खो जाती है। उस जिंदगी में पक्षियों के गीत भी खो जाते है। उस जिंदगी में नदियों की दौड़ती हुई गति भी खो जाती है। उस जिंदगी में कुछ नहीं बचता, सिर्फ बाजार बचता है। उस जिंदगी में काम के सिवाय कुछ भी नहीं बचता। उस जिंदगी में तनाव और परेशानी, चिंताओं के सिवाय कुछ नहीं बचता।

31--गलत उसूलों में ढाला मनुष्य आचरण---

ऐसी मनुष्यता जमीन पर कभी नहीं थी।

लेकिन आज तक जो मनुष्य को अब तक गलत उसूलों पर ढाला गया है। इसलिए समाज ऊँचा नहीं उठ पाया। समाज ऊंचा उठेगा उसी दिन, जिस दिन हम मनुष्य की सहजता को स्वीकार कर लगें, सरलता को, उसके व्यक्तित्व में जो भी है। उसको स्वीकार कर लेंगे, उसको समझेंगे, उस पर मेड़िटेट करेंगे, उस पर ध्यान को विकसित करेंगे। दुनिया में संयम की नहीं, ध्यान की जरूरत है। आदमी को कंट्रोल की नहीं, मेड़िटेशन की जरूरत है। आदमी को जागना सिखाना है। और अगर हम जागना सिखा सकें, तो एक दूसरी मनुष्यता पैदा हो जाएगी, मनुष्यता है। वह गलत सिद्धांतों के कारण गलत है।

32--अमृत का प्रवेश---

मैं आपसे कहना चाहता हूँ कि दुनियां के बहुत से अच्छे लोगो ने जिंदगी को गलत तरह से देखना सिखाया है। जिन लोगो ने भी कहां जिंदगी आसार है, जिन लोगो ने भी कहां जीवन दुःख है, जिन लोगो ने कहां जीवन छोड़ देने जैसा है, जिन लोगो न कहां जीवन पाप है, जिन लोगो न कहां जीवन कुछ भी नहीं सब माया है, सब व्यर्थ है, सब असार है, उन लोगों ने आपके मन में एक निगेटिव, एक नकारात्मक दृष्टि को जगह बना दी है, उन सारे लोगो ने मनुष्य को धार्मिक होने से रोका है,

जिन लोगो ने भी लाइफ निगेटिव आदतें ड़ाली हमारी और जिन्होंने जीवन के रस को, सब आनंद को निषेध किया, इनकार किया, उल सारे लोगों ने मनुष्य को परमात्मा से जोड़ने वाली कड़ी से वंचित किया है। क्योंकि मनुष्य तो केवल पाजिटिविटी में, जब वह परिपूर्ण विधायक रूप से जीवन के रस को देखता है, जब वह घने से घने अंधकार में एक प्रकाश की ज्योति को देखता है। जब वह कांटों से भरी झाड़ी में एक गुलाब के फूल को देखता है, और वह पाता है भगवान को कि धन्यवाद, तू अद्‌भुत है, यह जीवन चमत्कार है। इतने कांटों के बीच भी फूल पैदा हो जाता है, यह मिरेकल है, जब वह यह कह पाता है भगवान से तब वैसा आदमी जीवन के वे द्वार खोलता है, जहां से अमृत का प्रवेश होगा।

33--अमृत की खोज---

मैं धार्मिक मनुष्य उसको कहता हूं, जो जीवन की अर्जन की प्रक्रिया में संलग्न है,

उसको नहीं, जो मंदिर जा रहा है,

उसको नहीं जो सुबह गीता और कुरान पढ़ रहा है, उसको नहीं जिसने जनेऊ पहन रखा है, चोटी रख रखी है, उसको नहीं जो मस्जिद में जा रहा है और गिरजे में जा रहा है, उससे कोई धार्मिक होने का अनिवार्य संबंध नहीं है। धार्मिक होने का अनिवार्य संबंध इस बात से है कि जो जीवन के सृजन में संलग्न है, जिसने जीवन को स्वीकार नहीं कर लिया, जो जीवन को निर्मित करने में लगा है। जो प्रतिपल मृत्यु से जुझ रहा है, और अमृत की खोज कर रहा है। जो चुपचाप नहीं बैठा है कि

मौत आ जाए और बहा कर ले जाए। जो सिर्फ मृत्यु की प्रतीक्षा नहीं कर रहा है। जो जुझ रहा है, जो संघर्ष कर रहा है कि मृत्यु के इस धिराव के बीच में अमृत को कैसे उपलब्ध हो सकता हूं। मैं उसे कैसे पा सकता हूं जिसकी कोई मृत्यु नहीं है। क्योंकि वही जीवन हो सकता है, जहां मृत्यु न हो, ये जीवन होने का एक

धोखा मात्र ही है, वही जीवन है।

34--खतरे में जीना---

खतरे में जीना ही एक मात्र जीना है।

खतरे में जो जीने से ड़रता है, वह जीना ही नहीं चाहता है। इस दुनियां में सत्य केवल उनका है, जो खतरों की चुनौती स्वीकार करते है। जो अनंत की यात्रा पर निकलते है, अज्ञात की यात्रा पर निकलते है। जो ज्ञात किनारों को छोड़ देते है और अपने सफीना को लेकर बिना किसी नक्शे के उस दूर की यात्रा पर निकल जाते है,

जिसका कुछ पता नहीं है, ठिकाना नहीं है, हो भी, न हो भी, लेकिन उस दूर किनारा--पता नहीं, है भी या नहीं। लेकिन उस दूर किनारे की खोज का मजा इतना है की खोजी अगर सगर में भी डूब जाए, तो पहूँच जाता है, और जो इस किनारे पर बैठे रह जाते है, डरे-सहमे से, भयभीत से, वे किनारे पर ही बैठे रह जाते है। और सड़ते रहते है, उनकी जिंदगी केवल मौत है, क्योंकि वो डरते मौत से फिर उसे लांगगे कैसे, एक ऐसी भी जिंदगी है, जो मौत है, और एक ऐसी भी मौत है, जो जिंदगी है। चुन लो और साहास हो तो चल कर देख लो सत्य क्या है।

35--प्रेम करो--स्वयं को प्रेम करो----

प्रेम करो--स्वयं को प्रेम करो। अपने को प्रेम से भरो। उससे बहुत ऊर्जा का जन्म होता है। प्रेम अद्‌भुत शाक्ति है। और जब आप स्वयं अपने प्रति प्रेम से भरते हो। चित अपने रहस्य क्रमशः खोलने लगता है, और उसके प्रेम पूर्ण निरीक्षण से उसके भीतर आपका प्रवेश होता है। प्रेम संतुलन लाता है, धृणा और दमन नहीं। प्रेम निरीक्षण को संभव बनाता है, धृणा और विरोध नहीं, इस लिए मुझे आज्ञा दें कि

मैं आपको स्वयं से प्रेम करना सिखाऊ। यह कहना कैसा अजीब लगता है पर सत्य यहीं है। हम अपने से प्रेम नहीं करते है, और जो अपने से प्रेम नहीं करता, वह अपना सम्मान भी नहीं करता,

वह अपने जीवन का भी आदर नहीं करता। और इसलिए उसे कैसे भी व्यय और व्यतीत करता रहता है।

36--खिलने का आनंद---

एक फूल खिला है, वह किसी के लिए नहीं खिला है। और किसी बाजार में बिकने के लिए भी नहीं, राह से कोई गूजरें और उसकी सुगंध ले, इस लिए भी नहीं खिला है, कोई गोल्ड मैडल उसे मिले, कोई महावीर चक्र मिले, कोई पद्मश्री मिले, इसलिए भी नहीं खिला है। फूल बस खिला है, क्योंकि खिलना आनंद है। खिलना ही खिलने का उद्देश्य है। इसलिए ऐसा भी कह सकेते है कि फूल निरूद्देश्य खिला है। और जब कोई निरूद्देश्य खिलेगा तभी पूरा खिल सकता है। क्योंकि जहां उद्देश्य है भीतर वहां थोड़ा अटकाव हो जाएगा। अगर फूल इसलिए खिला है कि कोई निकले, उसके लिए खिला है, तो अगर वह आदमी

अभी रास्ते से नहीं निकल रहा तो फूल अभी बंद रहेगा, जब आदमी आएगा तब ही खिलेगा, लेकिन जो फूल अधिक देर बंद रहेगा, हो सकता है

उस आदमी के पास आ जाने पर भी खिल न पाएँ, क्योंकि न खिलने की आदत मजबूत हो जाएगी। नहीं, फूल इसलिए पूरा खिल पाता है कि कोई उद्देश्य नहीं है।

37--सतत बगावत--- मैं अपने धर्म को

कोई नाम देना नहीं चाहता हूं। मैं तो सतत बगावत सिखा रहा हूं, विद्रोह अतीत से है, विद्रोह परंपरा से है, विद्रोह शास्त्रों से है, विद्रोह शब्दों से है, विद्रोह मन से है, विद्रोह नैतिकता से है। फिर जो शोष रह जाता है, वह अनाम है, विशेषण-शून्य है। उसी शून्य का नाम धार्मिकता है,

उसी शून्यता में पूर्ण का फूल खिलता है।

38--साधारण होने में तृप्त----

मैं तुम्हारा सम्मान करता हूं, क्योंकि मुझे लगता है--
तुम्हारी निंदा तुम्हारे भीतर बैठे परमात्मा की निंदा है।

मैं तुमसे यह नहीं कहता हूँ तुम असाधारण हो जाना है। मैं तुमसे कहता हूं, तुम साधारण हो जाओ, तो सब मिल जाए। असाधारण होने की दौड़ अहंकार की दौड़ है। कौन नहीं असाधारण होना चाहता, मैं तो संन्यासी उसको कहता हूं, जो साधारण होने में तृप्त है।

39--आकाश में पंख फैलाना---

तुम्हें मैं निर्भय करना चाहता हूं,

यह पृथ्वी परमात्मा के विपरीत नहीं है, अन्यथा यह पैदा ही नहीं हो सकती थी। यह जीवन उसी से बह रहा है, अन्यथा यह आता कहां से। और यह जीवन उसी में जा रहा है, अन्यथा जाने की कोई जगह नहीं है। इसलिए तुम द्वंद्व खड़ा मत करना, तुम फैलना। तुम संसार में ही जड़ें डालना, तुम आकाश में ही पंख फैलाना

तुम दोनों का विरोध ताड़ देना,

तुम दोनों के बीच सेतु बन जाना। तुम एक सीढ़ी बनना,

जो एक जमीन पर टिकी है--मजबूत जमीन पर,

और जो उस खुले आकाश में मुक्त है,

जहां टिकने की कोई जगह नहीं है, ध्यान रखला, आकाश में सीढ़ी को कहां टिकाओगे, टिकानी हो तो पृथ्वी पर ही टिकानी होगी। दूसरी तरफ तो पृथ्वी पर ही टिकानी होगी। उस तरफ तो अछोर आकाश है, वहां टिकाने की भी जगह नहीं है। वहां तो तुम बढ़ते जाओगे। धीरे-धीरे सीढ़ी खो जाएगी, तुम भी खो जाओगे।

40--रामेश्वरम और गंगा जल-----

हिंदुओं न बड़ा अद्भुत काम किया है। पृथ्वी पर किसी जाति ने ऐसा अद्भुत काम नहीं किया। बाहर तो प्रतीक है और प्रतीकों में जब हम भटक गये तो हिंदुओं की सारी जीवन-चेतना खो गई। हम कहते है कि गंगाजल-रामेश्वरम में ले जा कर चढ़ा रहे है। वे सब भीतर शरीर के बिंदु है। एक बिंदु से ऊर्जा को लेना है और दूसरे बिंदु पर चढ़ाना है। एक बिंदु से ऊर्जा को खीचना है, और दूसरे बिंदु तक पहुंचना है।

तब तीर्थयात्रा हुई। पर हम अब पानी ढ़ो रहे है, गंगा से और रामेश्वरम तक। हमने पूरी पृथ्वी को नक्शे की तरह बना लिया था, आदमी का फैलाव। आदमी के भीतर बड़ा सूक्ष्म है सब कुछ। उसको समझने के लिए ये प्रतीक थे। और इन प्रतीकों को हमने सत्य मान लिया हम भटक गए। प्रतीक कभी सत्य नहीं होते, सत्य की तरफ इशारे होते है।

41--स्वास्थ्य और रोग---

स्वास्थ्य शब्द का अर्थ समझ लो तो रोग का अर्थ समझ में आ जाएगा। स्वस्थ का अर्थ होता है, स्वयं में स्थित हो जाना। यह शब्द बड़ा प्यारा है। स्वस्थ का अर्थ होता है, स्वयं में ठहर जाना। जो चीज भी तुम्हें स्वयं से दूर ले जाए, वह रोग। जो तुम्हें स्वयं से भटकाए, अलग करे, तोड़े, अस्वस्थ कर--वही रोग। कौन करता है तुम्हें अपने से दूर। तुम्हारी वासना, तुम्हारी तृष्णा भविष्य में भटकाती है। तुम्हारी तृष्णा कहती है। कल, कल होगा धन, कल बनेगा भवन, कल मिलेगी सुंदर स्त्री, सुंदर पुरूष, कल होगा एक बेटे का जन्म, फिर कल आएगी जीवन में बहारें,

आज थोड़ी ही देर की बात है, गुजार दो, आता है कल, लाएगा स्वर्ग। आता है कल सब ठीक हो जाएगा, जरा सी देर और कर लो प्रतीक्षा। थोड़ी और आशा को सम्हालो। बुझ मत जाने दो आशा का दीया--जलाए रखो। उकसाए रखो बाती को, डलते रहो थोड़ा और तेल, बस थोड़ी देर और कल आता है। कल कभी नहीं आता, आता है काल फिर कुछ नहीं होता।

42--जागरण की क्रांति---

उसके लिए जीवन परमात्मा हो जाता है। जीवन छोटे से राजों पर निर्भर होता है। और बड़े से बड़ा राज यह है कि सोया हुआ आदमी भटकता चला जाता है, चक्कर में, जागा हुआ आदमी चक्कर के बाहर हो जाता है। जागने की कोशिश ही धर्म की प्रक्रिया है। जागने का मार्ग ही योग है। जागने की विधि का नाम ही ध्यान है। जागना ही एक मात्र प्रार्थना है। जागना ही एक मात्र उपासना है। जो जागते है वे प्रभु के मंदिर को उपलब्ध हो जाते है। क्योंकि पहले वे जागते है, तो वृत्तियां, व्यर्थताएं, कचरा, कूड़ा-करकट चित से गिरना शुरू हो जाता है। धीर-धीरे चित निर्मल हो जाता है जागे हुए आदमी का। और चित निर्मल हो जाता है, तो चित दर्पण बन जाता है। जैसे झील निर्मल हो तो, चाँद तारों की प्रति छवि बनती है। और आकाश में चांद-तारें उतने सुंदर मालूम पड़ते, जितने झील की छाती पर चमक कर मालूम पड़ते है। जब चित निर्मल हो जाता है जागे हुए आदमी का, तो उस चित की निर्मलता में परमात्मा की छवि दिखाई पड़नी शुरू हो जाती है। फिर वह निर्मल आदमी कहीं भी जाए-- फूल में भी उसे परमात्मा दिखाई पड़ने लगता है, पत्थर में भी, मनुष्य में भी, पक्षियों में भी, पदार्थ में भी--जीवन की क्रांति का अर्थ हैः जागरण की क्रांति।

43--धन्यता का स्वर---

जब भी संन्यास पृथ्वी पर आता है-- चाहे याज्ञवल्क्य का हो, चाहे उदालक का, चाहे बुद्ध का, चाहे कबीर को, चाहे जरथुस्त्र का, चाहे बहाउदीन का-- जब भी संन्यास पृथ्वी पर आया है, तो गाता हुआ आया है, नाचता हुआ आया है। उसके हाथ में सदा ही वीणा है, उसके होठों पर सदा वंशी है। उसके प्राणों में सिर्फ एक स्वर है---अहो भाव का, धन्यता का। धन्य है हम कि उस महान अस्तित्व ने जीवन दिया, हमारे प्राणों में श्वास फूंकी। यही कृतज्ञता संन्यास है।

44--धर्मः प्रेम के फुल का सुवास---

धर्म प्रेम की अंतिम पराकाष्ठा है। प्रेम जैसे फूल है, धर्म प्रेम के फूल की सुवास है। काम है बीज, प्रेम है फूल, धर्म है फूल से उड़ गई सुगंध। इस लिए धर्म अदृश्य है। दृश्य तो होता है बुद्ध, नानक कबीर, कृष्ण, महावीर। ये फूल है। इनसे आस-पास सुगंध की तरह जो व्याप्त होता है, वह धर्म है। जो बुद्धि से सोचने चलते है,

उन्हें वह दिखाई नहीं पड़ता है। वह दिखाई वाली बात नहीं है, मुट्ठी में आ जाए ऐसा तथ्य नहीं, शब्दों में समा जाए ऐसा अनुभव नहीं। लेकिन जो ह्रदय को खोल देते है-- किसी सदगुरू के समक्ष, किसी सत्संग में-- जो पीने को राज़ी हो जाते है, जो डुबकी मारने को, गोता लगाने को राज़ी हो जाते है। बुद्धि के हिसाब-किताब को तट पर रख कर जो निकल पड़ते है तूफ़ानों में, अनंत की यात्रा पर-- वे जान पाते है कि धर्म क्या है।

45--जगत का सबसे बड़ा चमत्कार--

धर्म तो कभी-कभी अवतरित होता है--जिसने सत्य को जाना हो, उसके सान्निध्य में, जिसने सत्य को अनुभव किया हो, उसके पास बैठ जाने में, उसकी निकटता में, उसके साथ नाचने में, उसके साथ गाने में, उससे आंखें चार करने में। जहां खोजी की दो आंखें उन आंखों से मिल जाती है, जिसने खोज लिया, उन चार आंखों के मिलने में कुछ होता है। रहस्यपूर्ण, जादू भरा, इस जगत का सबसे बड़ा चमत्कार। उन चार आंखों के बीच कुछ घटता है,

जिसे पकड़ा नहीं जो सकता, छुआ नहीं जा सकता, देखा नहीं जा सकता, परन्तु अनुभव किया जा सकता है। वह जो घटना है उन आंखों के बीच, उसका नाम धर्म है। धर्म एक काव्य है---महाकाव्य। जो दो ह्रदयों की धड़कन के बीच जब जुगल बंदी हो जाती है, तब घटता है, जब दो व्यक्ति एक जागा हुआ और एक सोया हुआ-- एक लय में आबद्ध हो जाते है, उस लय में, उस सुर-ताल में, उस सरगम में धर्म छिपा है।

धर्म सत्संग की अनुभूति है।

46--तुम सम्राट हो--

हममें से कोई गरीब नहीं है। हममें से कोई भी भिखारी नहीं है। परमात्मा भिखारी पैदा ही नहीं करता। परमात्मा भिखारी पैदा करना भी चाहे तो नहीं कर सकता है। परमात्मा जिसे भी बनाएगा उसे सम्राट ही बनाएगा। उसके हाथों से सम्राट ही निर्मित हो सकते है। तुम भी सम्राट हो इसे जान लेना संबोधी है। तुम भी मालिकों के मालिक हो। इसे पहचान लेना बुद्धत्व है। तुम्हारे भीतर एक लोक है--अकूत संपदा का, अपरिसीम आनंद का, रहस्यों का,

कि उघाड़ते जाओ कितने ही, कभी पूरे उखाड़ ना पाओगें। ऐसी अनंतशृंखला है उसकी। इतने दीये जल रहे है भीतर, इतनी रोशनी है, और तुम अंधेरे में जी रहे हो। क्योंकि तुम्हारी आंखे बाहर अटकी है। बाहर अंधकार है, भीतर आलोक है। जो भीतर मुड़ा, जिसने अपने आलोक को पहचाना, वही बुद्ध है।

47--अतीत का विसर्जन---

लाओत्से से कोई पूछता कि तुम्हारा सबसे श्रेष्ठतम वचन कौन सा है। तो लाओत्से कहता है, यही। जो अभी-अभी बोल रहा हूं। बान गॉग से कोई पूछता है, तुम्हारी श्रेष्ठतम चित्र कृति कौन सी है, तो वान गॉग पेंट कर रहा है और कहता है, यही। जो मैं अभी पेंट कर रहा हूँ। अभी जो हो रहा है, वही सब कुछ है, इस अभी में जो सनातन को स्मरण रख कर जीना शुरू कर देता है। उसे रास्ता मिल गया, उसे सेतु मिल गया।

छोड़े अतीत को, छोड़े भविष्य को, पकड़े वर्तमान को। धीरे-धीरे अतीत को विसर्जित करते जाएं।

48--विचार की तरंगें--

एक हिटलर पैदा होता है, तो पूरी जर्मनी को अपना विचार दे देता है, और पूरे जर्मनी का आदमी समझता है कि ये मेरे विचार है। ये उसके विचार नहीं है, एक बहुत डाइनेमिक आदमी अपने विचारों को विकीर्ण कर रहा है। और लोगो में डाल रहा है, और लोग उसके विचारों की सिर्फ प्रतिध्वनियां है। और यह डाइनामिज्म इतना गंभीर और इतना गहरा है, की मोहम्मद को मरे हजार साल हो गए, जीसस को मरे दो हजार साल हो गए, क्रिश्चियन सोचता है कि मैं अपने विचार कर रहा हूं, वह दो हजार साल पहले जो आदमी छोड़ गया है, तरंगें, वे अब तक पकड़ रही है। महावीर या बुद्ध या कृष्ण, कबीर, नानक, अच्छे या बुरे कोई भी तरह के डाइनेमिक लोग--

जो छोड़ गए है वह तुम्हें पकड़ लेता है। तैमूरलंग ने अभी भी पीछा नहीं छोड़ा है दिया है मनुष्यता का, और न चंगीजखां ने पीछा छोड़ा है, न कृष्ण, न सुकरात, न सहजो ने, न तिलोमा, न राम, न रावण, पीछा वे छोड़ते ही नहीं। उनकी तरंगें पूरे वक्त होल रही है, तुम्हारी मन स्थिती जैसी हो, या जिस हालात में हो वहीं तरंग को पकड़ उसमें सराबोर हो जाती है, सही मायने में तुम-तुम हो ही नहीं,

तुम एक मात्र उपकरण बन कर रहे गये हो, मात्र रेडियों। जागना ही अपने होने की पहली शर्त है, ध्यान जगाने की कला का नाम है, ध्यान तुम्हारी आंखों को खोल पहली बार तुम्हें ये संसार दिखाता है। सपने के सत्य में, जागरण के सत्य में क्या भेद है। केवल--''ध्यान''

49--ब्रह्मचर्य--

सेक्स तो संपदा है। उससे लड़ कर उसको नष्ट मत कर लेना। उसे प्रेम से और आहिस्ता से बदलने की कीमिया है। खोजना है उसकी केमिस्ट्री कि वह कैसे बदल जाए। और मैं कहता हूं, उस किमिया के दो सूत्र है।

पहला सूत्र--सम्मान का भाव। और दूसरा सूत्र है--प्रेम का निरंतर विकास। जितना प्रेम बढ़ेगा, उतनी सेक्स की शक्ति प्रेम के मार्ग से प्रवाहित होने लगेगी। और धीरे-धीरे आप पाएंगे--

सारा प्रेम, सारा सेक्स, सारी प्रेम की शक्ति प्रेम का फूल बन गई है, और जीवन प्रेम के फूलों से भर गया है। सिर्फ प्रेम को उपलब्ध व्यक्ति ब्रह्मचर्य को उपलब्ध होता है। जितना बड़ा प्रेम, उतना बड़ा ब्रह्मचर्य।

50--देश-द्रोही या मानव द्रोही----

मैं तो राष्ट्रों में मानता नहीं। अगर मेरी सुनी जाए तो, मैं कहूंगा कि भारत को पहला देश होना चाहिए जो राष्ट्रीयता छोड़ दे। यह अच्छा होगा कि कृष्ण, बुद्ध, महावीर, पतंजलि और गोरख का देश राष्ट्रीयता छोड़ दे और कहे की हम अंतर्राष्ट्रीय भूमि है। भारत को तो संयुक्त राष्ट्र संघ की भूमि बन जाना चाहिए। कह देना चाहिए, यह पहला राष्ट्र है, जो हम संयुक्त राष्ट्र संघ को सौंपते है--सम्हालो।

कोई तो शुरूआत करे----। और यह शुरूआत हो जाए तो युद्धों की कोई जरूरत नहीं है, ये युद्ध जारी रहेगें जब तक सीमाएं रहेंगी। ये सीमाएं जानी चाहिए। तो ठीक ही कहते हो, कह सकते हो मुझे देश-द्रोही--

इन अर्थो में कि मैं मानव-द्रोही नहीं हूं। लेकिन तुम्हारे सब देश-प्रेमी मानव-द्रोही है। देश-प्रेम का अर्थ होता है मानव-द्रोह। देश-प्रेम का अर्थ होता खड़ों में बांटो। तुमने देखा न जो आदमी प्रदेश को प्रेम करता है। वह देश का दुश्मन हो जाता है, और जो जिले को प्रेम करता है।

वह प्रदेश का दुश्मन हो जाता है। और जो जिले को प्रेम करता है, वह प्रदेश का भी दुश्मन हो जाता है।

मैं दुश्मन नहीं हूं देश का, क्योंकि मेरी धारणा अंतर्राष्ट्रीय है। यह सारी पृथ्वी एक है। मैं बड़े के लिए छोटे को विसर्जित कर देना चाहता हूंद्य

51 धर्म नहीं--धार्मिकता

धर्म सिद्धांत नहीं है। धर्म फिर क्या है?

धर्म ध्यान है, बोध है, बुद्धत्व है। इसलिए मैं धार्मिकता की बात नहीं करता हूं। चूंकि धर्म को सिद्धांत समझा गया है। इस लिए ईसाई पैदा हो गए, हिंदू पैदा हो गए, मुसलमान पैदा हो गए। अगर धर्म की जगह धार्मिकता की बात फैले, तो फिर ये भेद अपने आप गिर जाएंगे। धार्मिकता कहीं हिंदू होती है, कि मुसलमान या ईसाई होती है। धार्मिकता तो बस धार्मिकता होती है। स्वास्थ्य हिंदू होता है, कि मुसलमान, कि ईसाई। प्रेम जैन होता है, बौद्ध होता है, कि सिक्ख। जीवन, अस्तित्व इन संकीर्ण धारणाओं में नहीं बंधता। जीवन सभी संकीर्ण धारणाओं का अतिक्रमण करता है। उनके पार जाता है।

52--भगवान नहीं--भगवत्ता

भगवान पर जोर नहीं देता हूं, भगवता पर जोर देता हूं। भग वत्ता का अर्थ हुआ,

नहीं कोई पूजा करनी है, नहीं कोई प्रार्थना, नहीं किन्हीं मंदिरों में घड़ियाल बजाने है, न पूजा के थाल सजाने है, न अर्चना, न विधि-विधान, यज्ञ-हवन,

वरन अपने भीतर वह जो जीवन की सतत धारा है। उस धारा का अनुभव करना है, वह जो चेतना है, चैतन्य है। वह जो प्रकाश है स्वयं के भीतर, जो बोध की छिपी हुई दुनियां है, वह जो बोध का रहस्यमय संसार है, उसका साक्षात्कार करना है, उसके साक्षात्कार से जीवन सुगंध से भर जाता है। ऐसी सुगंध से जो फिर कभी चुकती नहीं। उस सुगंध का नाम भग वत्ता है।

परम रस का अनुभव--

53--ध्यान है अंतर्यात्रा

और जिसकी अंर्त याता सफल है, उसकी बहिर्यात्रा भी सफल हो जाती है। क्योंकि फिर वे ही आंखे, भीतर के रस को लेकर बाहर देखती है। वो उस पाम रस का अनुभव होने लगता है। जिस दिन तुम्हें अपनी पत्नी में परमात्मा दिखाई पड़े, अपने पति में परमात्मा दिखाई पड़े अपने बच्चें में परमात्मा दिखाई पड़े। उस दिन जानना कि धम्र का जन्म हुआ है। उस दिन जानना कि संन्यास हुआ, इससे पहले नहीं। उससे पहले सब पलायन है, कायरता है, भगोड़ा पन है।

54--सृजन कठिन है--

विध्वंस आसान इस दुनिया में जो लोग बना नहीं सकते, वे मिटाने में लग जाते है, जो कविता नहीं रच सकते, वे आलोचक हो जाते है। जो धर्म का अनुभव नहीं कर सकते, वे नास्तिक हो जाते है। जो ईश्वर की खोज नहीं कर सकते, वे कहते है--ईश्वर है ही नहीं। अंगूर खट्टे है, इनकार करना आसान है, स्वीकार करना कठिन। जो समर्पित नहीं हो सकते, वे कहते है--समर्पित होए क्यों। मनुष्य की गरिमा उसके संकल्प में है, समर्पण में नहीं। जो समर्पित नहीं हो सकते, वे कहते है--,

कायर समर्पित होते है, बहादुर, वीर तो लड़ते है। ध्यान रखान, सृजन कठिन है, विध्वंस आसान है। जो माइकलएंजलो नहीं हो सकता। वह अडोल्फ हिटलर हो सकता है। जो कालिदास नहीं हो सकता, वह जौसेफ़ स्टैलिन हो सकता है। जो बानगाग नहीं हो सकता, वह माओत्से तुंग हो सकता है। विध्वंस आसान है।

55--पृथ्वी पर क्रांति--

पृथ्वी के दूर-दूर देशों से आए हुए ये लोग, आने वाली पूरी पृथ्वी पर क्रांति के पहले प्रतीक है। यह छोटी घटना नही है, बीज तो छोटा ही होता है। जब वृक्ष बनेगा और बादलों को छुएगा, तब तुम पहचान पाओगें, कितनी क्षमता छिपी थी एक बीज में, एक बीज पुरी पृथ्वी को हरियाली से भर सकता है। क्योंकि एक बीज में वृक्ष, फिर एक वृक्ष में अनंत बीज, फिर एक-एक बीज में अनंत बीज। एक बीज सारी पृथ्वी को फूलों से रंग सकता है। और एक संन्यासी सारी पृथ्वी को गैरिक कर सकता है। एक बुद्ध सारी पृथ्वी को बुद्धत्व की और अनुप्राणित कर सकता है।

56--सत्य के मार्ग पर---

ध्यान रहे--असत्य के मार्ग पर, सफलता मिल जाए तो व्यर्थ है, असफलता भी मिले तो सार्थक है। सवाल मंजिल का नहीं, सवाल कहीं पहुंचने का नहीं, कुछ पाने का नही--

दिशा का नहीं, आयाम का नहीं। कंकड़-पत्थर इकट्ठे भी कर लिए किसी ने, तो क्या पाया।

और हीरों की तलाश में खो भी गए, तो भी बहुत कुछ पा लिया जाता है--

उस खोने में भी, अंनत की यात्रा पर जो निकलता है, वे डूबने को भी उबरना समझते है।

57--प्रेम को जानने का उपाय---

पत्थर को सुंदर मूर्ति में निर्मित कर लेना, प्रेम को जानने का एक उपाय है। साधारण शब्दों को जाड़ कर एक गीत रच लेना, प्रेम को जानने का एक उपाय है। नाचना, कि सितार बजाना, कि बांसुरी पर एक तान छेड़ना,--ये सब प्रेम के ही रूप है।

58--देह का सम्मान करो--

मैं चाहता हूं कि तुम इस सत्य को ठीक-ठीक अपने अंतस्तल की गहराई में उतार लो। देह का सम्मान करे, अपमान न करना। देह को गर्हित न कहनाः निंदा न करना। देह तुम्हारा मंदिर है। मंदिर के भीतर देवता भी विराजमान है। मगर मंदिर के बिना देवता भी अधूरा होगा।

दोनों साथ है, दोनों समवेत, एक स्वर में आबद्ध, एक लय में लीन। यह अपूर्व आनंद का अवसर है। इस अवसर को तूम खँड़ सत्यों में तोड़ो।

59--सत्य का अवतरण--

सत्य जब भी अवतरित होता है, तब व्यक्ति के प्राणों पर अवतरित होता है। सत्य भीड़ के ऊपर अवतरित नहीं होता। सत्य को पकड़ने के लिए व्यक्ति का प्राण ही बीणा बनता है। वही से झंकृत होता है सत्य। भीड़ के पास उधार बातें होती है, जो कि असत्य हो गई है। भीड़ के पास किताबें है, जो कि मर चुकी है। भीड़ के पास महात्माओं, तीर्थंकरों, अवतारों के नाम है।

जो सिर्फ नाम है, जिनके पीछे अब कुछ भी नहीं बचा, सब राख हो गया है। भीड़ के पास परंपराएं है, भीड़ के पास याददाश्तें है। भीड़ के पास हजारों-लाखों साल की आदतें है। लेकिन भीड़ के पास वह चित नहीं है।

जो मुक्त होकर सत्य को जान सकता है, जो भी काई उस चित को उपलब्ध करता है, तो अकेले में, व्यक्ति की तरह उस चित को उपलब्ध करना पड़ता है।

60--नमस्कार का अदभुत ढंग--

इस देश ने नमस्कार का एक अद्भुत ढंग निकाला। दुनिया मैं वैसा कहीं भी नहीं है।

इसे देश ने कुछ दान दिया है मनुष्य की चेतना को, अपूर्व। यह देश अकेला है जब दो व्यक्ति नमस्कार करते है, तो दो काम करते है। एक तो दोनों हाथ जोड़ते है। दो हाथ जोड़ने का मतलब होता हैः दो नहीं एक। दो हाथ दुई के प्रतीक है, द्वैत के प्रतीक है।

उन दोनों को हाथ जोड़ने का मतलब होता है, दो नहीं एक है। उस एक का ही स्मरण दिलाने के लिए। दोनों हाथों को जोड़ कर नमस्कार करते है। और, दोनों को जोड़ कर जो शब्द उपयोग करते है। वह परमात्मा का स्मरण होता है। कहते हैः राम-राम, जय राम, या कुछ भी, लेकिन वह परमात्मा का नाम होता है। दो को जोड़ा कि परमात्मा का नाम उठा। दुई गई कि परमात्मा आया। दो हाथ जुड़े और एक हुए कि फिर बचा क्याः हे राम।

61 संक्रांति की घड़ी---

आज जितनी शुभ घड़ी है इतनी कभी न थी, क्योंकि सामूहिक नींद टूट गंइ है, अब सिर्फ व्यक्तिगत नींद तोड़ने का सवाल है। पहले तो व्यक्तिगत नींद तो थी ही। सामूहिक नींद भी थी। अब कम से कम सामूहिक नींद का बोझ हट गया है।

अब ता सिर्फ व्यक्तिगत नींद है, तुम जरा करवट ले सकते हो,

जरी झकझोर सकते हो अपने को, तो उठ आने में देर न लगेगी। इधर मैं अनेक लोगों पर ध्यान के प्रयोग करके कहता हूं तुमसे, यह कोई सैद्धांतिक बात बात नहीं कह रहा हूं, समय बहुत अनुकूल है। सच हर पच्चीस सौ सालों के बाद समय अनुकूल होता है।

जैसे एक साल में पृथ्वी का एक चक्कर पूरा होता है, सूरज का।

ऐसे पच्चीस सौ सालों में हमार सूर्य किसी एक महा सूर्य का एक चक्र पूरा करता है। हर पच्चीस सौ सालों के बाद संक्रमण की घड़ी आती है।

पच्चीस सौ साल पहले बुद्ध हुए, महावीर हुए, लाओत्से, कनफयूशियस,

च्वांगत्सु, लीहत्सु, जरथुस्त्र, साक्रेटीज, सारी दुनियां बुद्धो से भर गई, उसके भी पच्चीस सौ साल पहले कृष्ण, मोजेज, भीष्म पितामह, पतंजलि जैसे

बुद्ध पुरूष देखे, ये संक्रांति की घड़ी करीब है। और संक्रांति की घड़ी का अर्थ होता है, जब सामूहिक नशा टूट जाता है। सिर्फ व्यक्तिगत नशे के तोड़ने की जरूरत रहती है, उसे तोड़ना बहुत कठिन नहीं है, आसान है। इससे ज्यादा आसान कभी भी नहीं होगा। कभी ऐसा होता है कि नाव ले जानी हो उस पार तो पतवार चलानी पड़ती है, और ऐसा होता है, कि पतवार नहीं चलानी पड़ती सिर्फ पाल खोल दो, हवा अपने आप नाव को उस तरफ ले जाती है।

----परंपरा और धर्म

62 धर्म विद्रोह है

धर्म का और कोई रूप होता ही नहीं। धम्र कभी परंपरा बनता ही नहीं, जो बन जाता है, परंपरा वह धर्म है ही नहीं। परंपरा तो ऐसे है जैसे आदमी गुजर गया, उसके जूते के चिन्ह रेत पर पड़े रह गए।

वे चिन्ह जीवित आदमी तो है ही नहीं,

आदमी के जूते भी नहीं है। जीवित आदमी तो छोड़ो,

मुर्दा जूते भी उन चिन्हों में नहीं है,

छाया की भी छाया है। धर्म खतरनाक है, धर्म से ज्यादा खतरनाक और कोई चीज़ पृथ्वी पर नहीं है। लेकिन अक्सर देखोगे भीरूओं को धार्मिक बने। घुटने टेके, प्रार्थनाएं-स्तुति करते हुए, भयाक्रांत। उनका भगवन उनके भय का निचोड़ है। धर्म तो खतरनाक ढंग से जीने का नाम है। धर्म का अर्थ है निरंतर अभियान। धर्म का अर्थ ही है पुराने और पीटे-पिटाए से राज़ी न हो जाना। नए की, मौलिक की खोज। धर्म का अर्थ है, अन्वेषण।

धर्म का अर्थ है, जिज्ञासा, मुमुक्षा। धर्म का अर्थ है, उधार और बासे से तृप्त न हो जाना, धर्म वेद से राज़ी नहीं होता, जब तक अपना वेद निर्मित न हो जाए। धर्म स्मृति में नहीं है। धर्म अनुभूति में है। श्रुति और स्मृति। या तो सुना, या याद रखा। लेकिन धम्र तो है, अनुभूति, न श्रुति, न स्मृति।

--एस धम्मो सनंतनो

63 संदेह

संदेह पैदा क्यों होता है दुनिया में, संदेह पैदा होता है, झूठी श्रद्धा थोप देने के कारण। छोटा बच्चा है, तुम कहते हो मंदिर चलो। छोटा बच्चा पुछता है किस लिए?

अभी मैं खेल रहा हूं, तुम कहते हो, मंदिर में और ज्यादा आनंद आएगा।

और छोटे बच्चे को वह आनंद नहीं आता, तुम तो श्रद्धा सिखा रहे हो और बच्चा सोचता है, ये कैसा आनंद, यहां बड़े-बड़े बैठे है उदास,

यहां दोड भी नहीं सकता, खेल भी नहीं सकता। नाच भी नहीं सकता, चीख पुकार नहीं कर सकता, यह कैसा आनंद। फिर बाप कहता है, झुको, यह भगवान की मूर्ति है। बच्चा कहता है भगवान यह तो पत्थर की मूर्ति को कपड़े पहना रखे है। झुको अभी, तुम छोटे हो अभी तुम्हारी बात समझ में नहीं आएगी। ध्यान रखना तुम सोचते हो तुम श्रद्धा पैदा कर रहे हो, वह बच्चा सर तो झुका लेगा लेकिन जानता है, कि यह पत्थर की मूर्ति है। उसे न केवल इस मूर्ति पर संदेह आ रहा है। अब तुम पर भी संदेह आ रहा है, तुम्हारी बुद्धि पर भी संदेह आ रहा है। अब वह सोचता है ये बाप भी कुछ मूढ़ मालूम होता है। कह नहीं सकता, कहेगा, जब तुम बूढे हो जाओगे, मां-बाप पीछे परेशान होते है, वे कहते है कि क्या मामला है।

बच्चे हम पर श्रद्धा क्यों नहीं रखते, तुम्हीं ने नष्ट करवा दी श्रद्धा। तुम ने ऐसी-ऐसी बातें बच्चे पर थोपी, बच्चो का सरल ह्ृदय तो टुट गया। उसके पीछे संदेह पैदा हो गया, झूठी श्रद्धा कभी संदेह से मुक्त होती ही नहीं। संदेह की जन्मदात्री है। झूठी श्रद्धा के पीछे आता है संदेह, मुझे पहली दफा मंदिर ले जाया गया, और कहा की झुको, मैंने कहा, मुझे झुका दो, क्योंकि मुझे झुकने जैसा कुछ नजर आ नहीं रहा।

पर मैं कहता हूं, मुझे अच्छे बड़े बूढे मिले, मुझे झुकाया नहीं गया। कहा, ठीक है जब तेरा मन करे तब झुकना,

उसके कारण अब भी मेरे मन मैं अब भी अपने बड़े-बूढ़ो के प्रति श्रद्धा है। ख्याल रखना, किसी पर जबर्दस्ती थोपना मत, थोपने का प्रतिकार है संदेह। जिसका अपने मां-बाप पर भरोसा खो गया, उसका अस्तित्व पर भरोसा खो गया। श्रद्धा का बीज तुम्हारी झूठे संदेह के नीचे सुख गया।

--एस धम्मो सनंतनो

64 बच्चे और ध्यान

अगर मां बाप इतना ही कहे जितना वो जानते है, बच्चे को मुक्त रखे, उसकी सरल श्रद्धा नष्ट न करे। तो ये सार दुनियां धार्मिक हो सकती है,

ये दुनिया अधार्मिक नास्तिकों के कारण नहीं है। तुम्हारे थोथे आस्तिकों के कारण अधार्मिक है। ध्यान देना, सिद्धांत मत देना, यह मत कहना की भगवान है, यह कहना की शांत बैठने से धीरे-धीरे पता चल जाएगा। निर्विचार होने से पता चल जाएगा,

ध्यान दिया तो धर्म दिया, सिद्धांत दिया तो अधर्म दे दिए। शास्त्र मत देना, शब्द मत देना, निःशब्द होने की क्षमता देना। प्रेम देना।

ध्यान और प्रेम अगर दो चीजें तुम दे सको किसी बच्चे को, तो तुमने अपना कर्तव्य पूरा कर दिया। तुमने बच्चे की आधारशिला रख दी। इस बच्चे के जीवन में मंदिर बनेगा, इस बच्चे के शिखर आकाश में उंठेंगे, और इसके स्वर्ण-शिखर सूरज की रोशनी में चमकेगे। और चाँद तारों से बातें करेंगें।

--एस धम्मो सनंतनो

65 बच्चे और अनाचार

मनुष्य-जाती ने बच्चों पर जितना अनाचार किया है किसी और पर नहीं।

जब सारी दुनिया में सब अनाचार मिट जाएंगे, जब अंतिम अनाचार जो मिटेगा, वह होगा मां-बाप के द्वारा किया गया बच्चों के प्रति अनाचार होगा। वह अनाचार दिखाई नहीं पड़ता, क्योंकि प्रेम की बड़ी हमने बकवास उठा रखी है। कि हम सब प्रेम के कारण कर रहे है, तुम बच्चे को मारो प्रेम के कारण, सिखाओ कुछ तो प्रेम के कारण, तो बच्चा इनकार भी नहीं, विद्रोह भी नहीं कर सकता। सबसे पहले विद्रोह किया गरीबों ने अमीरों के खिलाफ, तब किसी ने सोचा भी नहीं था कि एक दिन स्त्रीयां पुरूषों के खिलाफ बगावत कर देंगी।

अब स्त्रियों ने बगावत की है पुरूषों के खिलाफ़। अभी कोई सोच भी नहीं सकता है कि एक दिन बेटे, बच्चे मां-बाप के खिलाफ बगावत करेंगे, मैं तुमसे कहता हूं, आगाह रहना। वो दिन जल्दी ही आएगा, करना ही पड़ेगा। जिस दि बच्चें मां-बाप के खिलाफ बगावत करेंगे, उस दिन साफ होगी बात कि मनुष्य- जाति ने अनंतकाल से कितने अनाचार बच्चों पर किया है।

--एस धम्मो सनंतनो

66 शराब और ध्यान

शराब का ध्यानियों ने विरोध किया है, क्योंकि शराब परिपूरक है। यह सस्ते में ध्यान की भ्रांति करवा देती है। ध्यानी को भी शराबी जैसा मस्ती में डूबा हुआ पाओगे, और शराब में भी तुम्हें ध्यान की थोड़ी सी गंध मिलेगी--रसमुगध। फर्क इतना ही होगा शराबी बेहोश है, ध्यानी होश में है। शराबी ने अपनी स्मृति खो दी और ध्यानी ने अपनी स्मृति पूरी जगा ली। मनुष्य बीच में है, मनुष्य द्वंद्व में है, मनुष्य आधा चेतन है, आधा अचेतन है। ध्यानी पूरा चेतन में है। शराब पी कर एकरसता को पा लेगा--सस्ती एक एकरसता, बोतल पी डाली, मिल गई एकरसता, सस्ते में मिल गई गयी। ध्यान तो वर्षो के श्रम से मिलेगा, ध्यान के लिए तो बड़ी कीमत चुकानी पड़ेगी। इंच-इंच बढ़ेगा, बूंद-बूंद बढ़ेगा, लंबी यात्रा है, पहाड़ की चढाई है। शराब तो उतार है, जैसे पत्थर को ढकेल दिया पहाड़ से; बस एक दफा धक्का मार दिया, काफी है।

फिर तो अपने आप ही उतार पर उतरता जाएगा। नीचे खाई-खंदक तक खूद ही पहुंच जाएगा,

धक्का मारने के बाद और धक्का मारने की जरूरत नहीं है। लेकिन पहाड़ पर चढ़ना हो तो, ऊर्ध्व यात्रा करनी पड़ेगी, धक्के से काम नहीं चलेगा, धकाते ही रहना पड़ेगा, जब तक चोटी पर नहीं पहूंच जाओ, और जरा भूक की कि पत्थर नीचे लुढक जाएगा। कहीं से भी गिरने की संभावना है,

इसलिए तुमने एक शबद सुना होगा--योगभ्रष्ट। तुमने भोगभ्रष्ट शब्द सुना, भोगी के भ्रष्ट होने की संभावना ही नहीं है। भोगी कभी गिरता ही नहीं, वह गिरा हुआ है आखिरी जगह, योगी ही गिरता है, भोगी होने से योगभ्रष्ट हो ना बेहतर है। चेष्टा तो कि थी एक प्रयास तो किया था, एक यात्रा की चुनौती स्वीकार तो की थी। गिर गए-- कोंइ बात नहीं, हजार बार गिरो, मगर उठ-उठ कर चलते रहना।

--एस धम्मो सनंतनो

67 होश--है रामबाण

क्रोध, लोभ, मोह, काम, मद-मत्सर, बीमारियां हजार है, अगर तुम एक-एक बीमारी को कसम खाकर छोड़ते रहे तो, अनंत जन्मों में भी छोड़ न पाओगें। एक-एक बीमारी अनंत जन्म ले लेगी, और छूटना न हो पाएगा। बीमारियां तो बहुत है, और तुम अकेले हो। अगर ऐसे एक-एक ताले खोजने चले,

और एक कुंजी को बनाने चले तो महल तुम्हे कभी उपलब्ध न हो पाएगा।

इसमें बहुत द्वार है, और बहुत ताले है। तुम्हें तो कोई एसी चाबी चाहिए जो चाबी एक हो और सब तालों को खोल दे। होश--की चाबी ऐसी चाबी है। तुम चाहे काम पर लगाओ तो काम को खोल देती है। क्रोध पर लगाओ तो क्रोध खोल देती है। लोभ पर लगाओ, लोभ खोल देती है। मोह पर लगाओ, मोह खुल जाता है पल में। तालों का तो फ़िकर ही नहीं करती है, मास्टर की है। कोई भी ताला इसके सामने टिकता ही नहीं। वस्तुतः तो ताले में चाबी डल ही नहीं पाती, तुम चाबी पास ले जाओ ताला खुला।

--एस धम्मो सनंतनो

68 धर्मों की चट्टानें--

जिसे लोग धर्म समझते है, वह धर्म नहीं है। ईसाइयत, इसलाम और हिंदू धर्म, ये धर्म नहीं है। लोग जिन्हें धर्म कहते है, वे मृत चट्टानें हे। मैं तुम्हें धर्म नहीं धार्मिकता सिखाता हूं--एक बहती हुई सरिता, पग-पग पर मोड़ लेती है, निरंतर अपना मार्ग बदलती है। लेकिन अंततः सागर तक पहुंच जाती है।

ये सभी तथाकथित धर्म तुम्हारे लिए कब्रें खोदते है। तुम्हारे प्रेम को तुम्हारे आनंद को और तुम्हारे जीवन को नष्ट करने के काम में संलग्न रहे है। और ईश्वर के बारे में, स्वर्ग नरक के बारे में, पुनर्जन्म... ओर न जाने कैसी-कैसी व्यर्थ बातों के विषय में वे तुम्हारी खोपड़ी में रंगीन कल्पनाएं मनमोहक भ्रम और भ्रांत धारणाओं का कूड़ा-करकट भरते रहते है।

मेरा तो भरोसा है प्रवाह मे, परिवर्तन में, गति में, क्योंकि यही जीवन का स्वभाव है। यह जीवन केवल एक स्थायी चीज को जानता है। और वह हैः सतत परिर्वतन सिर्फ परिवर्तन ही कभी परिवर्तन नहीं होता। अन्यथा हर चीज बदल जाती है। कभी पतझड़ आ जाता है। और वृक्ष नंगे हो जाते है। सारी पत्तियां चुपचाप, बिना शिकायत के गिर जाती है। और शाति पूर्वक पुनः उसी मिट्टी में विलीन हो जाती है।

नीले आकाश में बाँहें फैलाए नग्न खड़े वृक्षों का एक अपना ही सौंदर्य है। उनके ह्ृदय में एक गहन आशा और आस्था अवश्य होती होगी क्योंकि वह जानते है कि जब पुरानी पत्तियां झड़ती है तो नई आती ही होंगी। और जल्दी ही नई, ताजी और सुकोमल कोंपलें फूटने लगती है।

धर्म एक मृत संगठन नहीं है, संप्रदाय नहीं है, वरन एक तरह की धार्मिकता होनी चाहिए। एक ऐसी जीवंत गुणवता, जिसमें समाहित हैः सत्य के साथ होने की क्षमता। प्रामाणिकता, सहजता, स्वाभाविकता, प्रेम से भरे ह्ृदय की धड़कनें और समग्र अस्तित्व के साथ मैत्रीपूर्ण लयबद्धता। इसके लिए किन्हीं धर्मग्रंथों और पवित्र पुस्तकों की आवश्यकता नहीं है।

सच्ची धार्मिकता को मसीहाओं, उद्धारकों, पवित्र ग्रंथों, पादरियों, पोपों, पंडित, पुरोहित, मौलवियों, तुम्हारे शंकराचार्य की और किसी, मंदिर, मस्जिद, चर्चों की आवश्यकता नहीं है। क्योंकि धार्मिकता तुम्हारे ह्ृदय की खिलावट है। वह तो स्वयं की आत्मा के, अपनी ही सत्ता के केंद्र-बिंदु तक पहुंचने का नाम है। और जिस क्षण तुम अपने आस्तित्व के ठीक केंद्र पर पहुंच जाते हो। उस क्षण सौंदर्य का, आनंद का, शांति का और आलोक का विस्फोट होता है। तुम एक सर्वथा भिन्न व्यक्ति होने लगते हो। तुम्हारे जीवन में जो अँधेरा था वह तिरोहित हो जाता है। और जो भी गलत था वह विदा हो जाता है। फिर तुम जो भी कहते हो वह परम सजगता और पूर्ण समग्रता के साथ होते हो।

मैं तो बस एक ही पुण्य जानता हूं और वह हैः सजगता।